Sanskritik aur Samajik Anusandhan
www.shodhjournal.com
ISSN: 2582-5852; Impact Factor: RJIF 5.44
Received: 16-10-2020; Accepted: 02-11-2020; Published: 17-11-2020
Volume 1; Issue 2; 2020; Page No. 48-51

रेणु की कहानियाँः लोक रंग एवं लोक भाषा का आख्यान

डॉ. विनीता शुक्ला
सदस्य, नवल फाउनडेशन, लखनऊ, उत्तर प्रदेश, भारत

सारांश
लोक का रंग भारतीय जीवन में रचा बसा हुआ है। हिन्दी साहित्य में साहित्यकारों ने लोक भाषा एवं लोक रंग को अपने साहित्य में विषेष महत्व दिया है। हिन्दी कथा साहित्य फणीष्वर नाथ रेणु एक ऐसे कथाकार हैं, जिन्होंने अपने साहित्य के माध्यम से अंचल के यथार्थ को समग्रता में प्रस्तुत किया है। एक आंचलिक कथाकार के रूप में अपनी पहचान बनाने वाले रेणु की कहानियों को लोकरंग का आख्यान कहा जा सकता है। बोली–बानी एवं लोक की जीवन्तता और सजीव चित्रण आपके साहित्य को विषिष्ट बनाती है। लोक जीवन को समग्र रूप में प्रस्तुत कर आपने उस परम्परा का सूत्रपात किया, जिसे आंचलिक कथा परम्परा कहा जाता है।

मूल शब्दः लोक भाषा, संवेदना, आंचलिक, मुहावरें, महाकाव्यात्मक, आख्यान

प्रस्तावना

हिन्दी साहित्य के इतिहास में आधुनिक काल का सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्थान है। आधुनिक काल की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इस युग में साहित्य का जनतंत्रीकरण हुआ। जिसे साहित्य के नायकत्व की अवधारणा अब तक राजा–रानी तक या पौराणिक व्यक्तित्व तक सीमित थी, उसके केन्द्र में अब समाज के सभी वर्गों को प्रतिनिधित्व मिलने लगा। इसके साथ–साथ आधुनिक काल की सबसे बड़ी उपलब्धि यह है कि साहित्य की विविध विधाओं में लेखन का आरम्भ। पद्य के साथ–साथ गद्य की विविध विधाओं में लेखन आरम्भ हुआ। नाटक, निबन्ध, कहानी, उपन्यास आदि में लेखन आधुनिक काल की सबसे बड़ी देन है।

आधुनिक काल में पत्रकारिता का विकास हुआ। पत्रकारिता के विकास के साथ–साथ हिन्दी साहित्य में खड़ी बोली हिन्दी में लेखन आरम्भ हुआ। नाटक, कहानी और उपन्यास आदि के लेखन का प्रसार तेजी से हिन्दी प्रदेश में हुआ। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र और उनके मण्डल के लेखकों ने न केवल नाटक लेखन का कार्य किया, वरन उसके मंचन में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका का भी निर्वहन किया। पत्र–पत्रिकाओं के प्रकाशन के माध्यम से इस काल में लिखे जाने वाले साहित्य हिन्दी जनमानस के बीच तेजी से पढ़ा एवं सुना जाने लगा, जिसका भारतीय स्वाधीनता आन्दोलन और भारतीय नव जागरण पर प्रभाव देखा जा सकता है।

भारतेन्दु युग में साहित्य की जिन विधाओं में लेखन आरम्भ हुआ, उनका परिष्कृत एवं विकासमान स्वरूप द्विवेदी युग में देखने को मिलता है। इसी कारण कुछ आलोचकों ने द्विवेदी युग को जागरण सुधार काल भी कहा है। भारतेन्दु युग से जिस खड़ी बोली हिन्दी के लेखन की परम्परा का आरम्भ हुआ था, उसका परिष्कृत रूप जागरण सुधार काल में देखने को मिलता है। कथा साहित्य के क्षेत्र में भी इस युग में नये तरह की चेतना एवं संवेदना का सूत्रपात हुआ। इस युग के पूर्ववर्ती काल खण्ड में कथात्मक निबन्ध एवं उपन्यास लिखे जा रहे थे। इस युग की सर्वाधिक महत्वपूर्ण देन हिन्दी कहानी लेखन का आरम्भ। 1900 ई0 से सरस्वती का प्रकाशन आरम्भ हुआ। इसी वर्ष इसमें किशोरी लाल गोस्वामी कृत कहानी 'इन्दुमती' का प्रकाशन हुआ। कुछ आलोचक इसे हिन्दी की पहली कहानी मानते हैं। कुछ आलोचक इंशा अल्ला खां कृत 'रानी केतकी की कहानी' को हिन्दी की पहली कहानी स्वीकार करते हैं। हिन्दी की पहली कहानी चाहे कोई भी हो लेकिन हिन्दी कहानी का विकास द्विवेदी युग में ही हुआ। 1900 में ही माधव प्रसाद मिश्र कृत कहानी 'मन चंचलता' का प्रकाशन सुदर्शन पत्रिका में हुआ। 1902 में लाला भगवानदीन कृत 'प्लेग की चुडैल', 1903 में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल कृत 'ग्यारह वष का समय', 1907 में बंग महिला कृत 'दुलाई वाली' कहानी प्रकाशित हुई। इन कहानियों के माध्यम से हिन्दी कहानी का रूप निरन्तर निखरता गया। 1909 में काशी से 'इन्दु' का प्रकाशन आरम्भ हुआ। 1912–1918 तक हिन्दी कहानी शिल्प, संवेदना और भाषा के स्तर पर पूर्ण रूप से प्रतिष्ठित हो गयी।

1918 के बाद का समय हिन्दी साहित्य के लिए बहुत ही उर्वर रहा। कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक, आलोचना और अन्य विधाओं में कलात्मक एवं भाषाई प्रौढ़ता देखने को मिलती है। हिन्दी साहित्य के इतिहास में भक्ति काल के पश्चात् किसी कालावधि को सर्वाधिक महत्व दिया गया है तो यह समय है। नाटक के क्षेत्र में प्रसाद, निबन्ध एवं आलोचना के क्षेत्र में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, कविता के क्षेत्र में प्रसाद, पंत, निराला एवं महादेवी वर्मा और कहानी –उपन्यास के क्षेत्र में प्रेमचन्द का नाम विशेष उल्लेखनीय है। प्रेमचन्द को हिन्दी कथा सम्राट की संज्ञा से अभिहित किया गया है। प्रेमचन्द ने हिन्दी कथा साहित्य को सामान्य वर्णनात्मक स्तर से ऊपर उठाया और सामाजिक यथार्थ को कथा के व्यापक फलक पर उकेरने का कार्य किया। समाज के बोल–चाल की भाषा को अपनी कहानियों एवं उपन्यासों के माध्यम से साहित्यिक भाषा के रूप में प्रतिष्ठित किया। प्रेमचन्द की भाषा के सन्दर्भ में कमलेश्वर ने कहा कि–''प्रेमचन्द की भाषा को प्रेमचन्द ने ही अपने समय की भाषा बनाकर अन्तिम छोर तक पहुँचा दिया था।'' [1]

प्रेमचन्द ने कथा लेखन की जिस पद्धति का आरम्भ किया उसका परवर्ती कथाकारों ने निरन्तर परिष्कार एवं विकास किया। प्रेमचन्द के बाद के कथाकारों में भाषा की दृष्टि समृद्धि में विशेष योगदान –जैनेन्द्र, अज्ञेय, हजारी प्रसाद द्विवेदी, श्रीलाल शुक्ल, अमृत लाल नागर, राही मासूम रजा, यशपाल, मनोहर श्याम जोशी इत्यादि का है। कथा–साहित्य के सन्दर्भ में कहा जा सकता है–''कथा–साहित्य की भाषा कोशों से नही निकलती और न यह लेखकीय अन्तःपुरों में गढ़ी जाती है। कथा साहित्य की भाषा पात्रों के मानस और परिवेश के प्रभाव से निर्मित होती

है। जिसमें समाज के रूप–रंग, गंध, धुन संस्कृति, रीति–रिवाज और परिवेश जीवन्त होते है।''

प्रेमचन्द के बाद सामाजिक परम्परा के कथाकारों में फणीश्वर नाथ रेणु को सर्वाधिक महत्वपूर्ण योगदान है। रेणु की सर्वाधिक महत्वपूर्ण विशेषता में इनके कथा संसार की आचंलिकता है। अंचल की सम्पूर्णता में रेणु को विशेष सफलता मिली है। इनकी लेखन–शैली वर्णन प्रधान है, जिसमें पात्रों के समस्त मनोवैज्ञानिक सोच एवं हाव–भाव का विवरण लुभावने तरीके से किया गया है। पात्रों के चरित्र–निर्माण में रेणु सूक्ष्म मनो–भावों का विशेष ध्यान रखा है, क्योंकि पात्र एक समय में सामान्य–सरल मानव मन के अतिरिक्त कुछ नहीं होता। सामान्य परिस्थितियों के साथ–साथ विशेष परिस्थितियों में पात्रों के मनोभाव में जो परिवर्तन होता है, उसका भी अंकन रेणु ने बड़ी ही सफलता से किया है। इनकी लगभग सभी कहानियों में पात्रों की सोच घटनाओं से प्रधान होती है।

रेणु की कहानियों में अंचल की संवेदना अपने साकार एवं जीवन्त रूप में मौजूद रहती है। उन्होंने आंचलिक जीवन के सभी धुनों, गंधों, लयों, तालों, सुन्दरता और कुरूपता को शब्दों के माध्यम बांध कर प्रस्तुत किया है। रेणु की कथा भाषा में एक जादुई असर है, जो पाठक को अपने साथ बांध कर रखता है और उस अंचल की सैर कराता है। कथा भाषा के सन्दर्भ में विचार करते हुए अज्ञेय ने जो विचार किया है, वह रेणु की भाषा में देखने को मिलता है। अज्ञेय ने ''सामाजिक यथार्थ और कथा साहित्य'' शीर्षक पुस्तक की भूमिका में लिखा है– '' कथा साहित्य में साहित्यिक भाषा का प्रयोग नही चल सकता, यह बात तो उपन्यास के विकास के प्रारम्भिक युग में ही स्पष्ट हो गयी थी। लेकिन उस समय इसके निराकरण के लिए जहाँ–तहाँ प्रादेशिक भाषाओं अथवा आंचलिक, जातिगत, व्यवसायगत अथवा वर्णगत शब्दों, मुहावरों और व्याकरणिक विभिन्नताओं को ही कथोपकथन में लाना ही पर्याप्त समझा जाता था। जैसे–जैसे उपन्यास के क्षेत्र का विस्तार बढ़ा और कथा में सामाजिक परिवर्तनों के सूक्ष्म पर्यवेक्षण की प्रवृत्ति बढ़ी और कथा में सामाजिक परिवर्तनों के सूक्ष्मतर पर्यवेक्षण की प्रवृत्ति बढ़ी वैसे–वैसे यह स्पष्ट हो गया कि ऐसे उपाय बिल्कुल नाकाफी हैं तथा समस्या पर और गहराई से विचार करना होगा। आंचलिक उपन्यास के अभिर्भाव ने समस्या के निराकरण में भी महत्वपूर्ण योग दिया और उसे सुलझाने के अनेक सूत्र प्रस्तुत किये।'' [2]

उपरोक्त वक्तव्य फणीश्वर नाथ रेणु की कथा भाषा के सन्दर्भ में प्रांसगिक है। रेणु के उपन्यासों में ही नही उनकी कहानियों में भी जीवन्त अंचल का चित्र देखने को मिलता है। लोक परम्परा, रीति–रिवाज, संस्कृति, सभ्यता, गीत–संगीत के साथ–साथ लोक में प्रचलित कलाओं को भी व्यापक स्तर पर रेणु ने अपनी कथावस्तु में सम्मिलित किया है। रेणु एक समर्थ रचनाकार होने के साथ–साथ संवेदनशील इन्सान भी थे। रेणु ने सामाजिक दायित्व का भी निर्वहन किया। '1942 में रेणु स्वतंत्रता संग्राम में भाग लेते हैं, तो 1950 में उन्होंनें नेपाली क्रान्तिकारी आन्दोलन में हिस्सा लिया, जिसके परिणामस्वरूप नेपाल में जनतंत्र की स्थापना हुई। पटना विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों के साथ छात्र संघर्ष में सक्रिय रूप से भाग लिया और जय प्रकाश नारायण की सम्पूर्ण क्रान्ति में अहम भूमिका का निर्वहन किया। 1952–1953 के समय वे भीषण रूप से रोगग्रस्त रहे थे, जिसके बाद लेखन की ओर उनका झुकाव हुआ।'' [3]

1954 में आपका बहुचर्चित आंचलिक उपन्यास 'मैला आंचल' प्रकाशित हुआ। इसके अतिरिक्त आपके अन्य प्रकाशित उपन्यास हैं– परती परिकथा, जूलूस, दीर्घतपा, कितने चौराहे और पलटू बाबू रोड, एक आदिम रात्रि की महक, ठुमरी, अग्निखोर और अच्छे आदमी आपके कहानी संग्रह हैं। तीसरी कसम (मारे गये गुलफाम), लाल पान की बेगम, पंचलाइट, संवदिया, रसप्रिया, ठेस और तबे एकला चलो रे आपकी प्रमुख कहानियाँ हैं। इन कहानियों में संवेदना को नये रूप में ढालने का कार्य रेणु ने बखूबी किया है। अंचल एवं लोक जीवन के रंग–रूप, गंध, गली, कूचों का रेणु स्वयं हिस्सा थे। अपने जिये हुए जीवन को रेणु ने अपने कथा साहित्य में जीवन्त कर एक नये कथा संसार का निर्माण करते है। इस कथा संसार का निर्माण रेणु के भाषा कौशल के कारण ही संभव हो सका। मानव जीवन के अन्तस्थ को कथा फलक पर उकेरने के लिए रेणु की भाषा में लोक रंग का चटक रूप देखने को मिलता है। शब्दों द्वारा भाव, संवेदना और बिम्बों के सृजन में रेणु को अद्‌भूत सफलता मिली है। आपकी कहानी 'तीसरी कसम' पर इसी नाम से राजकपूर और वहीदा रहमान की मुख्य भूमिका में प्रसिद्ध फिल्म बनी। यह फिल्म हिन्दी सिनेमा में मील का पत्थर मानी जाती है। हीरामन और हीराबाई की प्रेमकथा ने प्रेम का एक अद्‌भुत महाकाव्यात्मक आख्यान प्रस्तुत किया। कहानी की विशेषता यह है कि यह कहानी पढ़ते हुए हमें भावनात्मक स्तर पर अधिक प्रभावित करती है, जबकि उसके अनुपात में 'तीसरी कसम' फिल्म कम स्पंदित करती है। यह रेणु के भाषा कौशल के कारण ही संभव है।

रेणु ग्राम्य जीवन से भलि–भाँति परिचित थे। ग्राम्य जीवन की सहजता, भय, उदारता, उग्रता एवं प्रतिबद्धता रेणु की कहानियों में देखी जा सकती है। ग्रामीण परम्परा एवं संस्कृति का निर्वहन तीसरी कसम, ठेस, लाल पान की बेगम, संवदिया और रसप्रिया कहानियों में देखने को मिलती है।

इन कहानियों में लोक जीवन की विविध परम्पराओं का चित्रण यथा रूप में किया गया है। 'संवदिया' कहानी लोक में प्रचलित सन्देश प्रेषण की परम्परा पर आधारित है। लोक कला के अंकन की दृष्टि से रेणु की 'ठेस' और 'रसप्रिया' कहानियाँ बेजोड़ हैं। गांव में नाच एवं मेले मनोरंजन के विशेष साधन हुआ करते थे। अंचल के सहज मन के सूक्ष्म भावों के चित्रण की दृष्टि से 'तीसरी कसम' और 'लाल पान की बेगम' कहानी अपने आप में विशिष्ट हैं। लाल पान की बेगम की नायिका मखनी फुआ, जंगी की पतोहू इन पात्रों में लोक के सहज मन में तत्क्षण उत्पन्न होने वाले आक्रोश और प्रेम का अंकन देखते ही बनता है–

–''क्यों बिरजू की माँ, नाच देखने नही जायेगी क्या?''

–''बिरजू की माँ के आगे नाथ और पीछे पगहिया न हो तब न, फुआ?'' गरम गुस्से में बुझी नुकीली बात फुआ की देह में धँस गयी और बिरजू की माँ ने हाथ के ढेले को पास ही फेक दिया.....बेचारे बागाड़ को कुकुरमाछीं परेशान कर रही है! आ हा, आय.....आय! हर्र–र्र–र्र–र्र। आय–आय!'' [4]

उपरोक्त पंक्तियों में लोक मन का आक्रोश देखने को मिलता है। कहानी में मुहावरों के प्रयोग से भाषा में जीवन्तता आ जाती है। 'आगे नाथ और पीछे पगहिया' लोक में प्रचलित उक्ति है और यह बात मखनी फुआ को लग जाती है। और वह पनभरियों से शिकायत करते हुए कहती हैं।

–''क्यों बिरजू की माँ, नाच देखने नही जायेगी क्या?''

–''जरा देखों तो इस बिरजू की मां को! चर मन पाट (जूट) का पैसा क्या हुआ है, धरती पर पाँव ही नही पड़ते! निसार करों!'' [5]

उपरोक्त पंक्तियों में मखनी फुआ गांव की अन्य महिलाओं के समक्ष अपना पक्ष रखती हैं। भाषा के माध्यम से सूक्ष्म मनोभावों को अभिव्यक्ति देने में रेणु की कथा भाषा अत्यन्त समर्थ एवं प्रभावशाली है। मुहावरों और ध्वन्यात्मकता को पिरोकर रेणु ने प्रस्तुत किया है। मुहावरों के साथ–साथ अंचल का यथार्थ अभिव्यक्त करने में गालियों का विशेष स्थान है। लोक जीवन में मुहावरों, लोकोक्तियों के साथ–साथ लोकगीतों एवं गालियों का प्रयोग भी बहुतायत देखने को मिलता है– ''गाँव में भी तो अब ठठेर–बैसकोप का गीत गाने वाली–पतुरिया पुतोहू सब आने लगीं हैं। कहीं बैठके 'बाजे न मुरलिया' सीख रही होगी ह–र–जा–ई–ई। अरी चम्पि–या–या–या।

जंगी की पुतोहू ने बिरजू की माँ की बोली का स्वाद लेकर कमर पर घड़े को सँभाला और मटककर बोली– ''चल दिदिया, चल! इस मुहल्ले

में लाल पान की बेगम बसती है! नही जानती, दोपहर–दिन और चौपहर–रात बिजली की बत्ती भक्–भक् कर जलती है!'' [6]
ह–र–जा–ई–ई। अरी चम्पिया–या–या! और भक्–भक् जैसे की ध्वन्यात्मकता के माध्यम से रेणु पाठक या आस्वाद के समक्ष जीवन्त चित्र प्रस्तुत कर देते हैं। भाषा की ध्वन्यात्मकता के माध्यम से रेणु ने श्रव्य, दृश्य एवं गंध बिम्बों को भी प्रस्तुत किया है।

श्रव्य बिम्ब – ''अपने बैलों की घंटी है, क्यों री चम्पिया?
चम्पिया और बिरजू ने प्रायः एक ही साथ कहा हूँ –ऊँ–ऊँ।
–चुप! – बिरजू की माँ ने फिसफिसाकर–शायद गाड़ी भी है धड़धड़ाती है न?
हूँ–ऊँ–ऊँ।'' [7]

''गाड़ी ने सीटी दी, हीरामन को लगा, उसके अन्दर से कोई आवाज निकल कर सीटी के साथ ऊपर की ओर चली गयी – कू – ऊ – ऊ! ठस्स.....!।

छि–ई–ई छक्क! गाड़ी हिली! थ्हरामन ने अपने दाहिने पैर के अगूँठे कों बायें पैर की ऐड़ी से कुचल दिया।'' [8]

''धिरिनागि, धिरिनारि, धिरिनागि–धिनता!
.....अ् – कि – हे – ए – ए – हा – आ आ – ह–हा!
सामने झरबेरी के जंगल के उस पार किसी ने सुरीली आवाज में, बड़े
समारोह के साथ रस प्रिया की पदावली उठायी।
न – – वृ –वृदा–वन, न –व–तरू–गन।'' [9]

श्रव्य बिम्बो में रेणु ने संवादों के ध्वन्यात्मकता को मूर्त कर दिया है। कथा भाषा का ऐसा सर्जनात्मक प्रयोग हिन्दी कथा साहित्य में बिरले ही देखने को मिलता है। लोक रंग और लोक कला को जीवन्त रूप में प्रस्तुत करने के निमित्त रेणु ने ऐसे चित्र भी प्रस्तुत किये हैं जिसमें भाषा के द्वारा ही हम उस परिवेश से रूबरू हो जाते हें जिसकी कथा कही जा रही है।

दृश्य विम्ब– ''गाड़ी की आड़ में सड़क के किनारे दूर तक घनी झाड़ी फैली हुई थी। दम साधकर तीनों प्राणियों ने झाड़ी को पार किया–बेखटके, बे आहट फिर एक ले, दो ले – दुलकी चाल! छोनों बैल सीना तानकर फिर तराई के घने जंगलों में घुस गये। राह सूँघते, नदी–नाला पार करते हुए भागे पूँछ उठाकर। पीछे–पीछे हिरामन।[10]
''पूर्णिमा का चाँद सिर पर आ गया है।.....बिरजू की माँ ने असली रूपा का मंगटिका पहना है आज पहली बार। बिरजू के बप्पा को हो क्या गया हे, गाड़ी जोतता क्यों नहीं, मुह की ओर एकटक देख रहा है, मानों नाच की लालयान की.....। गाड़ी पर बैठते ही बिरजू की माँ की देह में अजीब गुदगुदी लगने लगी।''[11]
''मोहन बेसुध होकर गा रहा था। मृदंग के बोल पर वह झूम–झूमकर गा रहा था। मिरदंगिया की आँखें उसे एकटक निहार रही थी और उसकी उँगलियाँ फिरकी की तरह नाचने को व्याकुल हो रही थी।..... .....चालीस वर्ष का अधपागल युगों के बाद भाववेश में नाचने जगा।.....रह–रहकर वह अपनी विकृत आवाज में पदों की कड़ी धरता– फोंय–फोंय, सोंय–सोंय!
धिरनागि–धिनता। ''दु हु रस ..मकृम तनु–गुने नहीं ओर। लागल दुहुक न भांगय जो–र।''
'मोहना के आधे काले और आधे लाल होठों पर नयी मुसकराहट दौड़ गयी।[12]

''पहली सांझ में ही अमावस्या का अंधकार। किस राह से वह किधर जा रहा है?.....नदी है! कहाँ से आ गयी नदी? नदी नहीं, खेत है।.....ये झोपड़े हैं या हाथियों का झुंड? ताड़ का पेड़ किधर गया? वह राह भूलकर न जाने भटक गया.....इस गांव में आदमी नही रहते क्या?''[13]
फणीश्वर नाथ रेणु एक सफल किस्सागो हैं। कथा प्रस्तुति के इनकी शैली बेजोड़ है। रेणु जी जिस अंचल की कथा को पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत किया है उसकी बोली, बानी, रीति, नीति, कला एवं गीत से भलिभाँति परिचित थे। केवल परिचित ही नही थे वरन् उन स्थितियों को जी भी रहे थे, जिन्हें वे विषय–वस्तु के रूप में चुनते है। उपरोक्त वर्णित विशेषताओं के अतिरिक्त रेणु ने लोकगीत अंचल जीवन का अभिन्न अंग है। लोक को समग्रता में प्रस्तुत करते हुए लोकगीत अनायास ही उनकी कहानियों में आ जाते है। रेणु की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि लोकगीत उनकी किस्सागोई के अभिन्न अंग के रूप में दृष्टिगत होते हैं–

''सजनवा बैरी हो गय हमार! स्जनवा?.....!
टरे, चिठिया हो तो सब कोई बाँचे, चिठिया हो तो.....
हाय! करमवा, हाय करमवा.....
कोई न बाँचे हमारों, सजनवा.....हो करमवा.....'' [14]
''हाँ .....रे, हल जोते हलवाहा भैया रे.....
खुरपी रे चलावे.....म–ज–दू–र
एहि री, धनी मोरा हे रूसलि।'' [15]

रेणु का कथा साहित्य लोक जीवन की बहुरंगी छटाओं से अटा पड़ा है। लोकभाषा की बारिक बनावट और संश्लिष्ट जीवन स्थितियों को रेणु कथा भाषा में प्रयुक्त कर अंचल के समग्र यथार्थ को पाठक या आस्वादक तक सम्प्रेषित करते हैं। कृषि हमारी आंचलिक संस्कृति का अभिन्न हिस्सा है। कृषि संस्कृति से जुड़े हुए अनेक प्रसंग उनके कथा साहित्य में अनायास ही आ गये हैं–

''.....पंचसीस ट्टटी में खोंस दे, अपने खेत का ह।
– अपने खेत का?.....हुलसती हुई बिरजू की माँ ने पूछा–पक गए ध्यान?
– नहीं, दस दिन में अगहन चढ़ते–चढ़ते लाल होकर झुक जायेंगी सारे खेत की बालियाँ।''[16]

धान की बालियों को देखकर बिरजू से रहा नहीं गया और उसने मुह में डाल लिया। इस पर बिरजू की माँ उसे डाँटती है तो उसके बप्पा कहते हैं कि–

– ''क्या हुआ, डाँटती क्यों है?
– ''नवान्न के पहले ही नया धान जुठा दिया, देखते नही?''
– अरे, इन लोगों को सब कुछ माफ है। चिरई–चुरमुन है ये लोग!'' [17]

नवान्न और पंचसीस भारतीय कृषि संस्कृति का अहम हिस्सा है। आज यह परम्परा क्षीर्ण होती जा रही है। रेणु ने उसे अपने कहानियों के माध्यम से अगली पीढ़ी तक पहुँचाने का कार्य किया। रेणु का मन लोक में रमता है। उन्हें सिरचन के हुनर की फिक्र है, हरगोबिन जैसे संवदिया का चरित्र उन्हें प्रीतिकर लगता है, मिरदंगिया के लोक मन और मोहना के प्रतिप्रेम से लगाव है, बिरजू की माँ के व्यक्तित्व और हिरामन और हीराबाई के प्रेम में अटूट आस्था है। लोकरंग और लोकभाषा रेणु के कृतिव एवं व्यक्तित्व का अभिन्न अंग है। एक आंचलिक कथाकार के

रूप में फणीश्वर नाथ रेणु की प्रसिद्धी का आधार लोक के प्रति उनका अगाध लगाव ही है।

सन्दर्भ

1. नयी कहानी की भाषाः गति में आकार गढ़ने का प्रयास/169 (नयी कहानी की भूमिकाःकमलेश्वर)
2. सामाजिक यथार्थ और कथा भाषाः अज्ञेय / भूमिका/ 27
3. hi wikipedia.org/wike फणीनाथ रेणु
4. चुनी हुई रचनाएँः फणीश्वर नाथ रेणु, (लाल पान की बेगम), /107
5. वही, / 107
6. वही, / 108
7. वही, / 113
8. चुनी हुई रचनाएँः फणीश्वर नाथ रेणु (तीसरी कसम) /106
9. चुनी हुई रचनाएँः फणीश्वर नाथ रेणु (रस प्रिया) /74
10. चुनी हुई रचनाएँः फणीश्वर नाथ रेणु (तीसरी कसम) /801
11. चुनी हुई रचनाएँः फणीश्वर नाथ रेणु (लाल पान की बेगम) /116
12. चुनी हुई रचनाएँः फणीश्वर नाथ रेणु (रस प्रिया) /74
13. चुनी हुई रचनाएँः फणीश्वर नाथ रेणु (संवदिया) /202
14. चुनी हुई रचनाएँः फणीश्वर नाथ रेणु (तीसरी कसम) /87
15. चुनी हुई रचनाएँः फणीश्वर नाथ रेणु (रस प्रिया) /69
16. चुनी हुई रचनाएँः फणीश्वर नाथ रेणु (लाल पान की बेगम) /114
17. वही, / 114

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. हिन्दी साहित्य का इतिहासः डॉ0 नगेन्द्र
2. नयी कहानी की भूमिकाः कमलेश्वर
3. सामाजिक यथार्थ और कथा भाषाः अज्ञेय
4. आधुनिक हिन्दी साहित्य का इमिहासःबच्चन सिंह
5. चुनी हुई रचनाएँ : फणीश्वर नाथ रेणु